स्व० श्रीमती ओम्‌शान्ति द्विवेदी स्मृति-पुष्प-माला-६

कुम्भपर्व-माहात्म्य

लेखक

डा० कपिलदेव द्विवेदी

कुलपति

गुरुकुल महाविद्यालय

ज्वालापुर (हरिद्वार)

एवं

डा० भारतेन्दु द्विवेदी

अनुसंधान परिषद्

ज्ञानपुर (वाराणसी)

१९८६ ई०

मूल्य- दो रुपये

संस्था का परिचय

विश्वभारती अनुसंधान परिषद् (VISHVA BHARTI RESEARCH INSTITUTE) वैदिक शोधकार्य की अग्रगण्य संस्था है। इसकी स्थापना १९७१ ई० में हुई थी। इसके मुख्य उद्देश्य हैं वैदिक वाङ्मय का प्रचार, संस्कृत के दुर्लभ ग्रन्थों का प्रकाशन, संस्कृत के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशन।

...श्वभारती वेदामृतम्-ग्रन्थमाला ४० भागों में प्रकाशित ... इनमें प्रत्येक विषय से संबद्ध लगभग १००-१०० ...हित दिए जाएंगे। वेदामृतम् के ८ भाग ...के हैं। ग्रन्थमाला का विवरण अन्त में ... को सस्ते मूल्य में जन-साधारण ...स्य बनाए जा रहे हैं। इस ... प्राप्त हो रहा है।

...द सब सत्य ... आर्य

दिनांक : १३-२- १९८६
(वसन्त पंचमी)

(...) कपिलदेव द्विवेदी

प्रस्तावना

कुम्भपर्व पर लाखों व्यक्ति देश और विदेश से अध्यात्म-ज्ञान और गंगा स्नान के निमित्त आते हैं। वे पर्व की पवित्रता को आधार मानकर अपने जीवन को पवित्र बनाने के लिए कुम्भपर्व पर एकत्र होते हैं। परन्तु ९० प्रतिशत से अधिक श्रद्धालु कुम्भ पर्व का न इतिहास जानते हैं और न उसकी उपयोगिता ही ठीक ढंग से समझते हैं। हमारे शास्त्रीय ग्रन्थों में विशेष रूप से पुराणों में गंगा, गंगास्नान, कुम्भपर्व आदि के विषय में विस्तृत वर्णन दिया हुआ है। इस पुस्तिका का उद्देश्य है उन समस्त शास्त्रीय बातों से जनसाधारण को परिचित कराना। इसके लिए कुम्भपर्व से संबद्ध आवश्यक सामग्री का संकलन किया गया है।

पुराणों आदि में गंगा आदि के विषय में कुछ अतिश्योक्ति पूर्ण बातें भी कही गई हैं। उन पर ध्यान न देकर उसके भौतिक और प्रयोगिक पक्ष पर ही ध्यान देना उचित है। यह आवश्यक नहीं कि पुराणों में वर्णित माहात्म्य आदि से लेखक सहमत हो। ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से पुराणों का यह प्रसंग उपयोगी है। अतः जन साधारण के लिए कुम्भ पर्व के प्रसाद रूप में यह पुस्तिका जनता के हाथों में समर्पित है। यह पर्व मानवमात्र के लिए शुभ हो।

दिनांक : १३-२-१९८६
(वसन्त पंचमी)

(डा०) कपिलदेव द्विवेदी

विषय-सूची

१. कुम्भपर्व का उद्देश्य

भारतवर्ष के प्राचीन मनीषियों ने सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना को उद्बुद्ध करने के लिए विविध पर्वों का आयोजन किया था। उनका उद्देश्य था—समाज में राष्ट्रीयता और भावनात्मक एकता का सूत्रपात करना। राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता के लिए आवश्यक है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति विभिन्न प्रान्तों और देशों से परिचित हो तथा उनसे सम्पर्क स्थापित करे। इसी उद्देश्य से कुम्भपर्व का भी भारतवर्ष के चार विभिन्न स्थलों पर आयोजन किया गया था। हरिद्वार और प्रयाग ये दो स्थान उत्तर भारत में हैं तथा उज्जैन और नासिक दक्षिणी भाग में हैं। सामाजिक एकता, सांस्कृतिक विचार-विनिमय, भावात्मक एक-सूत्रता, शास्त्रीय आदान-प्रदान, अन्य क्षेत्रीय परम्पराओं और भाषाओं आदि के समन्वय के लिए इन पर्वों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। आज भी इन पर्वों पर देश और विदेश के लाखों यात्री एक स्थान पर एकत्र होते हैं। ये विशिष्ट पर्व इस उद्देश्य से आयोजित किए जाते थे कि इसमें विभिन्न स्थानों से साधु, संन्यासी, योगी, विद्वान् उच्चकोटि के साधक तथा मनीषी व्यक्ति अपने ज्ञान और उपदेश के द्वारा सामान्य जनता को कर्तव्योपदेश दें। कुम्भ शब्द का अर्थ भी इसका संकेत करता है - **कुः पृथिवी उभ्यतेऽनुगृह्यते उत्तमोत्तममहात्मसङ्गमैः तदीयहितोपदेशैः यस्मिन् सः कुम्भः।** (अर्थात् उत्तम-उत्तम महात्माओं के संगम तथा उनके हितोपदेशों द्वारा पृथ्वी अनुगृहीत होती हो जिसमें उसे कुम्भ कहते हैं।)

इन पर्वों का यह भी उद्देश्य था कि मनीषी और महात्मा सामान्य जनता को योग-साधना आदि विषयों का क्रियात्मक बोध कराएँ। ज्ञान और विज्ञान की शिक्षा दें। शास्त्रों में वर्णित विविध विद्याओं पर प्रकाश डालें। जन-साधारण में व्याप्त कुरीतियों और अन्धविश्वासों को दूर करके उन्हें सन्मार्ग पर लाने की शिक्षा दें। शास्त्रीय विषयों का चिन्तन और मनन किया जाए। जनसाधारण में व्याप्त भौतिकवाद से ऊपर उठकर अध्यात्म में प्रवृत्ति कराई जाए। यज्ञ, दान, तप आदि कर्मों से आन्तरिक शुद्धि और बाह्य वातावरण को शुद्ध बनाने की चेष्टा की जाएं। दीनों, अनाथों, दुःखितों के लिए सहयोग में मार्ग प्रस्तुत किए जाएँ। विविध स्थानों से आए व्यक्तियों के सम्पर्क से ज्ञान वृद्धि की जाए और उन्हें अध्यात्म की दीक्षा दी जाए। कुम्भ शब्द की एक अन्य व्याख्या की गई है—कुत्सित दोषों को जगत् कल्याण की भावना से प्रेरित होकर दूर करने वाले को कुम्भ कहते हैं। (कु कुत्सितं **उम्भति दूरयति जगद्धितायेतिवा कुम्भः**)

कुम्भ शब्द की एक व्याख्या की गई है—**कुं पृथिवीं उम्भति पूरयति मङ्गलसम्मानादिभिरिति कुम्भः। कुं पृथिवीं भावयति दीपयति तेजोवर्द्धनेनेति वा कुम्भः।** अर्थात् पृथ्वी को मंगल-सम्मान आदि से पूर्ण करने वाले को कुम्भ कहते हैं। पृथ्वी को सुख-प्रदान तथा तेजोवृद्धि द्वारा दीप्त करने वाले को कुम्भ कहते हैं। ये व्याख्याएँ इस बात का स्पष्ट संकेत करती हैं कि इन पर्वों के द्वारा राष्ट्रीय एकता और विश्वजनीन भावना को उद्बुद्ध करना अभीष्ट था। ये पर्व सांस्कृतिक और धार्मिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। सामान्य मनुष्य धार्मिक भावना से प्रेरित होकर इन स्थानों पर जाता है। धार्मिक भावना को उद्बुद्ध करने के लिए गंगा, गंगास्नान, कुम्भ एवं तीर्थों आदि का अत्यन्त अति-

शयोक्तिपूर्ण महत्त्व वर्णित किया जाता है। इससे ही सामान्य जनता आकृष्ट होती है। वह पापक्षय की भावना से आती है। परन्तु अपने साथ महात्माओं आदि के उपदेशों और निर्देशों को साथ में ले जाती है। यह उनके भावी जीवन के निर्माण में हितकर होती है। यही कुम्भ आदि पर्वों का प्रसाद है और पवित्र जीवन के द्वारा मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करना है।

२. वैदिक साहित्य में कुम्भ

वैदिक साहित्य में कुम्भ शब्द का प्रयोग कलश के लिए है। अथर्ववेद के काल सूक्त में पूर्ण कुम्भ का उल्लेख है। इस कुम्भ के विषय में कहा गया है कि यह कुम्भ अनेक प्रकार से होता है। यह कुम्भ काल रूप में है। दूसरे मन्त्र में बताया गया है कि वह तीन लोकों का पालक है। यही संसार में व्याप्त है और इससे बड़ा कोई तेज नहीं है। इस मंत्र से यह ज्ञात होता है कि विश्व में व्याप्त काल चक्र ही एक पूर्ण कुम्भ है। यह १२ राशियों में होता हुआ पूर्ण होता है। अतः पूर्ण कुम्भ का समय १२ वर्ष निर्धारित किया गया है। यह काल रूपी कुम्भ ऋतु वर्ष मास आदि के रूप में अनेक रूप से विद्यमान है और यह कालचक्र संसार का पालक है।

पूर्णः कुम्भोऽधिकाल अहितस्तं वै पश्यामो बहुधा नु सन्तः।
स इमा विश्वा भुवनानि प्रत्यङ् कालं तमाहुः परमे व्योमन्॥
अथर्ववेद १९. ५३. ३

एक अन्य मंत्र में कहा गया है कि ४ कुम्भों को चार स्थान पर रखता हूँ।

चतुरः कुम्भांश्चतुर्धा ददामि ॥ अथर्ववेद ४. ३४. ७

यह मन्त्र भी अथर्ववेद में आता है। इसमें ब्रह्मौदन का वर्णन है। ये ४ कुम्भ कौन से हैं और कहाँ रखे गए हैं, इसकी विस्तृत व्याख्या 'कुम्भ का आध्यात्मिक स्वरूप' शीर्षक में की गई है। इसी प्रकार कलश के अर्थ में ही कुम्भी शब्द का प्रयोग अथर्ववेद में अनेक मन्त्रों में आया है। इसको यज्ञ के साधनों से और घृतादि से युक्त बताया गया है।

कुम्भी वेद्यां मा व्यथिष्ठा यज्ञायुधैराज्येनातिषिक्ता।

अथर्ववेद १२. ३. २३

यजुर्वेद में भी कलश के अर्थ में कुम्भी का प्रयोग है और इसमें पितृजनों के लिए स्वधा रखने का वर्णन है।

दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यः। यजुर्वेद १९. ८७

इन मन्त्रों से ज्ञात होता है कि कलश अर्थ में कुम्भ और कुम्भी का प्रयोग अत्यन्त प्राचीन है।

३. कुम्भपर्व का इतिहास

कुम्भपर्व का इतिहास मुख्य रूप से स्कन्दपुराण में प्राप्त होता है। पुराणों के अनुसार दैत्यों के राजा बलि ने अपने पराक्रम से सभी देवताओं को परास्त कर दिया था। ब्रह्मा जी के परामर्श से देवताओं ने दैत्यों के साथ सन्धि कर ली और दोनों ने मिलकर विश्वकल्याण के लिए समुद्र मन्थन प्रारम्भ किया। इसमें मंदर पर्वत को मथनी बनाया गया। वासुकी नाग को मथनी घुमाने के के लिए रस्सी बनाया गया। मथनी को सँभालने के लिए कच्छप-रूपधारी विष्णु मन्दर पर्वत की पीठ पर बैठे। इस समुद्र मन्थन से १४ रत्न निकले। सबसे प्रारम्भ में विष निकला। उसे देवताओं की प्रार्थना पर भगवान् शिव ने पी लिया और वे नीलकण्ठ बने। इसके पश्चात् कामधेनु आदि रत्न निकले। अन्त में अमृत कलश निकला। अमृत कलश निकलते ही मन्थन का कार्य बन्द कर दिया गया। अमृत प्राप्त करने के लिए देवताओं और दानवों में विवाद प्रारम्भ हुआ। बृहस्पति के संकेत पर इन्द्र का पुत्र जयन्त अमृत कलश लेकर भागा। दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य के आदेश पर दैत्यों ने अमृत कलश लेने के लिए जयन्त का पीछा किया। इस कलश के लिए देवों और दानवों में १२ दिन तक निरन्तर युद्ध होता रहा। इस युद्ध में यह अमृत कलश १२ स्थानों पर रखा गया। इन १२ स्थानों में से ८ स्थान स्वर्ग में तथा ४ स्थान पृथ्वी पर हैं। पृथ्वी पर ये चार स्थान हैं--हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और नासिक। कलह शान्त करने के लिए विष्णु ने मोहिनी का रूप धारण करके सबको यथोचित अमृत बाँट दिया। इस प्रकार देवों और दानवों के युद्ध का अन्त हुआ।

इस कुम्भ की रक्षा का उत्तरदायित्व ४ देवों पर था। चन्द्रमा ने गिरने से रक्षा की, सूर्य ने फूटने से, देवों के गुरु बृहस्पति ने दैत्यों के अपहरण से और शनि ने इन्द्र के भय से घट की रक्षा की। अतः इन ग्रहों के संयोग से कुम्भ पर्व की तिथियाँ निश्चित की जाती हैं।

सूर्येन्दुगुरुसंयोगस्तद्राशौ यत्र वत्सरे।
सुधाकुम्भप्लवे भूमौ कुम्भो भवति नान्यथा।। स्कन्द पुराण

अर्थात् जिस वर्ष अमृत कलश गिरने की राशि पर सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति का संयोग होता है, उस समय पृथिवी पर कुम्भ होता है।

पृथ्वी पर कुम्भपर्व चार स्थानों पर मनाया जाता है। ये चार स्थान हैं—हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन, और नासिक।

पृथिव्यां कुम्भयोगस्य चतुर्धा भेद उच्यते।
विष्णुद्वारे तीर्थराजेऽवन्त्यां गोदावरीतटे।।
सुधाबिन्दुविनिक्षेपात् कुम्भपर्वेति विश्रुतम्।। स्कन्द पुराण

४. कुम्भ के प्रवर्तक

कुम्भपर्व कब से प्रारम्भ हुआ इस विषय में कोई निश्चित मत नहीं है। परन्तु पुराणों में कुम्भ पर्व का वर्णन होने से यह स्पष्ट है कि इन पुराणों की रचना से पूर्व कुम्भपर्व प्रारम्भ हो चुका था। इस विषय में अधिक सम्मत मत यह है कि कुम्भपर्व के प्रवर्तक आद्य शंकराचार्य हैं। जिस प्रकार उन्होंने देश के चारों भागों में ४ पीठों की स्थापना की थी, इसी प्रकार धार्मिक संस्कृति को सुदृढ़ करने के लिए उन्होंने ४ स्थानों पर कुम्भपर्व की योजना प्रवृत्त की। उन्हीं के आदर्शों को लेकर आज तक कुम्भ पर्व चार विभिन्न स्थानों पर मेले के रूप में आयोजित किया जाता है। इसमें आर्य धर्म से सम्बद्ध सभी संप्रदाय देश और धर्म की रक्षा के लिए एकत्र होते हैं। कुम्भपर्व हिन्दू मात्र के लिए एक आदर्श और पवित्र पर्व माना जाता है। यह पर्व सभी हिन्दू धर्मियों की एकता का प्रतीक है।

कुम्भपर्व के प्रवर्तक आद्य शंकराचार्य हैं अतः यह पर्व आज भी मुख्य रूप से साधुओं और सन्यासियों का पर्व माना जाता है। साधु समाज इस पर्व को आदर और श्रद्धा के साथ मानता है। इस पर्व का मुख्य उद्देश्य हिन्दू जाति में जागरण एवं एकता की भावना उत्पन्न करते हुए आध्यात्मिकता की ओर मानव मात्र को प्रवृत्त करना है।

५. कुम्भ का दार्शनिक एवं आध्यात्मिक स्वरूप

कुम्भपर्व का वास्तविक उद्देश्य है, अमृततत्त्व को प्राप्त कर मोक्ष की प्राप्ति करना। मानव शरीर एक पूर्ण कुम्भ है। इसमें ४ स्थानों पर अमृततत्त्व रखा हुआ है। योग साधना के द्वारा इन स्थानों को प्रबुद्ध किया जाता है और इन स्थानों से क्षरित होने वाले अमृत का पान किया जाता है। इससे मानव मोक्ष प्राप्त करता है।

अथर्ववेद में ब्रह्मौदन सूक्त में ४ स्थानों पर ४ कुम्भ रखने का वर्णन है। इनके लिए कहा गया है कि यह दुग्ध अमृत आदि से परिपूर्ण है। मानव शरीर में अमृत तत्त्व से युक्त ४ कलशों के ४ स्थान ये हैं—१. ब्रह्मरन्ध्र या सहस्रारचक्र (सिर के ऊपरी भाग में ज्ञान तन्तुओं का केन्द्र), २. आज्ञाचक्र (भ्रू मध्य में ज्ञान नेत्र का स्थान), ३ अनाहतचक्र (हृदय में नाभि से १२ अंगुल ऊपर), ४. मणिपूरचक्र (नाभि में)।

मानव शरीर में विद्यमान ८ चक्रों में से ये ४ चक्र मुख्य हैं। इन स्थानों पर नाड़ी तन्तुओं के संस्थान हैं। ये चक्र मानव में ऊर्जा के स्रोत एवं केन्द्र हैं। इन स्थानों पर अमृत केन्द्रित है। साधना के द्वारा इन केन्द्रों को प्रबुद्ध करके अमृत की प्राप्ति की जाती है और अमरत्व की सिद्धि की जाती है। अनेक उपनिषदों में इस विषय का बहुत विस्तृत वर्णन है। उपनिषदों में स्पष्ट किया गया है कि प्राणायाम, ध्यान आदि तथा मूलबन्ध, उड्डयान-बन्ध और जालन्धरबन्ध इन तीन त्रिबन्धों के द्वारा शक्ति के स्रोत

स्वरूप इन चार चक्रों को प्रबुद्ध किया जाता है। जिससे शिरोभाग से क्षरित होने वाला अमृत इन स्थानों पर भी प्राप्त होता है।

इन चार कुम्भों में अमृत का निरन्तर प्रवाह होता है। साधना के द्वारा इन ग्रन्थियों का भेद करने से अमरत्व की प्राप्ति होती है। अतएव अथर्ववेद में शिरोभाग को ब्रह्म का स्थान कहा गया है।

ब्रह्मास्य शीर्षम्। अथर्ववेद ४.३४.१

अथर्ववेद में जिस पूर्ण कुम्भ की चर्चा की गई है, वह कालचक्र रूपी पूर्ण कुम्भ है। १२ मास के द्वारा यह कालचक्र पूर्ण होता है। इसी प्रकार एक वर्ष में १२ राशियों का संक्रमण होता है और ये १२ राशियाँ १२ वर्ष में अपने स्थान पर पहुँचती है। इसको आधार मानकर १२ वर्षीय कुम्भ का विचार प्रस्तुत किया गया है।

कुम्भ का वास्तविक अभिप्राय पूर्वोक्त आध्यात्मिक ज्ञानयज्ञ है और यह मूल रूप में आध्यात्मिक यज्ञ है। इसको ही भौतिक रूप देने के लिए चार स्थानों पर चार कुम्भ पर्वों की योजना की गई है।

६. कुम्भपर्व के स्थान और समय

कुम्भ का यह पर्व हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और नासिक इन चार स्थानों पर १२ वर्ष के अन्तर से मनाया जाता है।

गङ्गाद्वारे प्रयागे च धारा-गोदावरीतटे॥
कुम्भाख्येयस्तु योगोऽयं प्रोच्यते शङ्करादिभिः॥

गङ्गाद्वार (हरिद्वार), प्रयाग, धारा नगरी (उज्जैन) और गोदावरी (नासिक) में शङ्करादि देवगण ने कुम्भ-योग कहा है।

हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और नासिक इन चारों स्थानों पर कुम्भ पर्व अलग-अलग समय पर मनाया जाता है। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(क) हरिद्वार

जिस समय बृहस्पति कुम्भराशि पर स्थित हो और सूर्य मेष-राशि पर रहे, उस समय, गङ्गाद्वार [हरिद्वार] में कुम्भ पर्व का योग होता है।

पद्मिनीनायके मेषे कुम्भराशिगते गुरौ।
गङ्गाद्वारे भवेद्योगः कुम्भनामा तदोत्तमः॥ स्कन्द पु०

हरिद्वार में कुम्भ के तीन स्नान मुख्य हैं—प्रथम-शिवरात्री, द्वितीय—चैत्र अमावस्या, तृतीय एवं मुख्य स्नान—चैत्र के अन्त में अथवा वैसाख के प्रथम दिन, जिस दिन बृहस्पति कुम्भराशि पर और सूर्य मेष राशि पर हो।

(ख) प्रयाग

मेषराशिं गते जीवे मकरे चन्द्रभास्करौ।
अमावस्या तदा योगः कुम्भाख्यस्तीर्थनायके॥ स्कन्द पुराण

अर्थात् जिस समय बृहस्पति मेष राशि पर स्थित हों तथा चन्द्रमा और सूर्य मकर राशि पर हों तो उस समय तीर्थराज प्रयाग में कुम्भ-योग होता है।

प्रयाग में भी कुम्भ के तीन स्नान हैं। प्रथम स्नान—मकर संक्रान्ति [मेष राशि पर बृहस्पति का संयोग होने पर],

द्वितीय एवं मुख्य स्नान—माघकृष्णा मौनी अमावस्या, तृतीय स्नान— माघ शुक्ला वसन्तपंचमी।

(ग) उज्जैन [अवन्तिका]

मेषराशि गते सूर्ये सिंहराशौ बृहस्पतौ।
उज्जयिन्यां भवेत् कुम्भः सदा मुक्तिप्रदायकः ॥

अर्थात् जिस समय सूर्य मेष राशि पर हो और बृहस्पति सिंह-राशि पर हो तो उस समय उज्जैन में कुम्भपर्व का योग होता है।

उज्जैन का प्राचीन नाम उज्जयिनी, अवन्ती, अवन्तिका और धारा आदि है। उज्जयिनी का ही अपभ्रंश उज्जैन है। इसका प्राचीन नाम विशाला भी है। उज्जैन में केवल एक दिन ही कुम्भ-स्नान होता है।

(घ) नासिक [गोदावरी]

मेषराशि गते सूर्ये सिंहराशौ बृहस्पतौ।
गोदावर्यां भवेत् कुम्भो जायते खलु मुक्तिदः ॥ स्कन्द पुराण

अर्थात् जिस समय सूर्य मेष राशि पर हो और बृहस्पति सिंह-राशि पर हो तो उस समय गोदावरी (नासिक) में मुक्तिप्रद कुम्भपर्व का योग होता है।

७. कुम्भ और कुम्भी

हरिद्वार और प्रयाग में पूर्ण कुम्भ और कुम्भी ये दो मेले होते हैं। किन्तु उज्जैन और नासिक में पूर्ण कुम्भ का ही एक मेला होता है। इन दो स्थानों पर अर्ध कुम्भ [कुम्भी] का मेला नहीं होता है।

हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और नासिक इन चारों स्थानों में प्रत्येक १२वें वर्ष में कुम्भ का योग पड़ता है। किन्तु इन चारों स्थानों के कुम्भपर्व का क्रम इस प्रकार निर्धारित है, जिससे कि इन चारों स्थानों में से प्रत्येक तीन वर्ष के बाद कहीं न कहीं कुम्भ पूर्व होता ही रहता है। जिस वर्ष प्रयाग में कुम्भपर्व का मेला होता है, उसके ठीक तीन वर्ष बाद उज्जैन में तथा उज्जैन के कुम्भपर्व के ठीक तीन वर्ष बाद हरिद्वार में कुम्भपर्व होता है। इस प्रकार प्रत्येक तीन-तीन वर्ष के कुम्भ पर्व के बाद पुनः प्रयाग में १२ वर्ष बाद कुम्भपर्व का योग होता है। इनके बीच प्रत्येक छः-छः वर्ष पर केवल हरिद्वार और प्रयाग में अर्धकुम्भी होती है। हरिद्वार की अर्धकुम्भी के साथ नासिक का कुम्भ होता है और प्रयाग की अर्धकुम्भी के साथ उज्जैन का कुम्भ उस वर्ष होता है।

८. कुम्भ-स्नान का महत्त्व

पुराणों में कुम्भस्नान का महत्त्व अत्यन्त भावुकता के साथ दिया गया है। प्रत्येक कुम्भ के स्नान को मोक्षदायक तथा अश्व-मेधादि के तुल्य फल वाला कहा गया है। स्कन्दपुराण आदि में इसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

हरिद्वार में कुम्भ पर्व पर स्नान को मोक्षदायक बताया गया है।

कुम्भराशिं गते जीवे तथा मेषे गते रवौ।
हरिद्वारे कृतं स्नानं पुनरावृत्तिवर्जनम्॥

कुम्भराशि में बृहस्पति हो तथा मेषराशि पर सूर्य हो तो हरिद्वार के कुम्भ में स्नान करने से मनुष्य पुनर्जन्म से रहित हो जाता है।

प्रयाग के कुम्भ-पर्व के स्नान को सबसे बढ़कर बताया गया है।

सहस्रं कार्तिके स्नानं माघे स्नानशतानि च।
वैशाखे नर्मदा कोटिः कुम्भस्नानेन तत्फलम्॥ स्कन्दपुराण

कार्तिक मास में एक हजार बार गंगा में स्नान करने से, माघ में सौ बार गंगा में स्नान करने से और वैशाख में करोड़ बार नर्मदा में स्नान करने से जो फल होता है, वह प्रयाग में कुम्भपर्व पर सिर्फ एक बार ही स्नान करने से प्राप्त होता है।

विष्णु पुराण में भी कुम्भ स्नान का महत्त्व वर्णित है—

अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च।
लक्षं प्रदक्षिणा भूमेः कुम्भस्नानेन तत्फलम् ॥ विष्णुपुराण

अर्थात् हजार अश्वमेध यज्ञ करने से, सौ वाजपेय यज्ञ करने से और लाख बार पृथ्वी की प्रदक्षिणा करने से जो फल प्राप्त होता है, वह फल केवल कुम्भ के स्नान से ही प्राप्त होता है।

स्कन्दपुराण में उज्जैन में कुम्भस्नान के फल को बताते हुए कहा गया है कि यह मोक्षप्रद है।

कुशस्थली महाक्षेत्रं योगिनां स्थानदुर्लभम्।
माधवे धवले पक्षे सिंहे जीवे अजे रवौ ॥
तुलाराशौ निशानाथे पूर्णायां पूर्णिमातिथौ।
व्यतीपाते तु सञ्जाते चन्द्रवासरसंयुते।
उज्जयिन्यां महायोगे स्नाने मोक्षमवाप्नुयात् ॥ स्कन्दपुराण

धारा (उज्जैन) में होने वाला कुम्भ मोक्ष प्रदान करने वाला है—

धारायां च तदा कुम्भो जायते खलु मुक्तिदः।

नासिक कुम्भ में गोदावरी में स्नान का महत्त्व बताते हुए कहा गया है कि गोदावरी में कुम्भ स्नान हजारों वर्षों तक भागीरथी में स्नान से बढ़कर है—

षष्टिवर्षसहस्राणि भागीरथ्यवगाहनम्।
सकृद् गोदावरीस्नानं सिंहस्थे च बृहस्पतौ ॥

अर्थात् जिस समय बृहस्पति सिंह राशि पर हो उस समय गोदावरी में केवल एक बार स्नान करने से मनुष्य साठ हजार वर्षों तक भागीरथी में स्नान करने के तुल्य पुण्य प्राप्त करता है।

ब्रह्मववर्तपुराण में गोदावरी में कुम्भ स्नान के पुण्य को अश्वमेध और एक लाख गोदान के पुण्य के बराबर बताया गया है—

अश्वमेध फलं चैव लक्षगोदानजं फलम् ।
प्राप्नोति स्नानमात्रेण गोदायां सिंहगे गुरौ ।। ब्रह्मवैवर्तपुराण

अर्थात् जिस समय बृहस्पति सिंहराशि पर स्थित हो (कुम्भ पर्व का योग हो) उस समय गोदावरी में केवल स्नानमात्र से ही मनुष्य अश्वमेध यज्ञ करने का तथा एक लाख गोदान करने का पुण्य प्राप्त करता है।

९. हरिद्वार माहात्म्य

पुराणों में हरिद्वार का हरिद्वार और गंगाद्वार नाम प्राप्त होता है। पद्मपुराण में हरिद्वार का अनेक बार उल्लेख हुआ है तथा उसके माहात्म्य का वर्णन किया गया है। पद्मपुराण के षष्ठभाग के अध्याय २१, २३, २१७ में हरिद्वार का महत्त्व अत्यन्त विस्तार से वर्णन है। इसके साथ ही शिवालिक पर्वत का वर्णन 'श्रीशैल माहात्म्य' वर्णन के रूप में दिया गया है। इस प्रसंग में कहा गया है कि यहाँ पर ऋषिगण विष्णु और शिव के ध्यान में रत रहते हैं। कोई निराहार रहते हैं, कोई कन्दमूलफल ही खाते हैं और कुछ मौन रहकर तपस्या करते हैं। [पद्मपुराण ६ उत्तर खण्ड अध्याय २० श्लोक ७ से ९]।

श्री शैलः पर्वतो रम्यः०। [पद्म० उत्तर० २०.१]
शिवध्यानरताः केचित् केचिद् विष्णुपरायणाः। [,, श्लोक ७]
निराहाराश्च केऽप्यत्र, केचित् पर्णाशने रताः।
कन्दमूलफलाहाराः केचिन्मौनव्रताः स्थिताः ।। [,, श्लोक ८]

हरिद्वार के महत्त्व के विषय में कहा गया है कि यह महापुण्य वाला तीर्थ है। यहाँ देव, ऋषि, मुनि और साक्षात् विष्णु का निवास है। यह तीर्थ सर्वोत्ताम तीर्थ है। यह सारे पापों को नष्ट करने वाला है।

हरिद्वारं महापुण्यं शृणु देवर्षिसत्तम।
यत्र गङ्गा वहत्येव तत्रोक्तं तीर्थमुत्तमम् ॥ [पद्मपु०उ० २१.१]
यत्र देवा वसन्तीह ऋषयो मनवस्तथा।
यत्र देवः स्वयं साक्षात् केशवो नित्यमाश्रितः ॥ [,, श्लोक २]
गङ्गातीर्थं महत्पुण्यं सर्वपापप्रणाशनम्।
लोकाः सर्वे वदन्त्येवम् एतत् तीर्थोत्तमोत्तमम् ॥ [,, श्लोक ७]

हरिद्वार के प्रसंग में उत्तरखण्ड में अध्याय २२ में वर्णन किया गया है कि राजा भगीरथ कैलाश पर्वत पर गए और वहाँ तपस्या करके पृथ्वी पर गंगा को लाए। गगा का पहला नाम अलकनन्दा हुआ। यह गंगा विष्णु के पैरों से निकल कर जब हरिद्वार में आयी तब यह हरिद्वार उत्तम तीर्थ के रूप में विख्यात हुआ।

अलकनन्दा तदा नाम गङ्गायाः प्रथमं स्मृतम्।
हरिद्वारे यदाऽऽयाता विष्णुपादोदकी तदा।
तदेव तीर्थं प्रवरं देवानामपि दुर्ल्लभम् ॥
[पद्मपुराण उत्तर २२.१७-१८]

यत्र गङ्गा महारम्या नित्यं वहति निर्मला।
एतत्कथानकं पुण्यं हरिद्वाराख्यामुत्तमम् ॥ पद्मपु०उ०२२.२५

अध्याय २१७ में हरिद्वार का महत्त्व वर्णन करते हुए कहा गया है कि हरिद्वार में स्नान का महत्त्व अश्वमेध यज्ञ के बराबर है। आगे कहा है कि हरिद्वार सर्वतीर्थ शिरोमणि है। यह भी

कहा गया है कि पृथिवी पर हरिद्वार के समान और कोई तीर्थ धर्म अर्थ काम और मोक्ष का देने वाला नहीं है।

हरिद्वारस्य माहात्म्यमश्वमेधफलप्रदम्। पद्मपु०उ०२१७.६
हरिद्वारस्य सदृशं शक्रप्रस्थगतस्य वै।
न तीर्थं पृथिवीलोके चतुर्वर्गफलप्रदम्॥ पद्मपु०उ०२१७.४९

१०. ब्रह्मकुण्ड (हर की पैड़ी)

हरिद्वार में स्थित ब्रह्मकुण्ड या हर की पैड़ी हरिद्वार का सबसे पवित्र तीर्थ स्थान माना जाता है। इसके विषय में कथन है कि ब्रह्मा ने यहीं पर तपस्या की थी और यज्ञ भी किया था। यहीं पर ब्रह्मा की पादुका [खड़ाऊँ] भी है। यहाँ पर हरि और हर [विष्णु और शिव] के निवास के कारण हरिद्वार और हर-द्वार नाम पड़े। यज्ञ कुण्ड के नाम पर ब्रह्म-कुण्ड नाम पड़ा। यह भी कहा जाता है कि राजा विक्रमादित्य के भाई भर्तृहरि ने यहाँ तपस्या की थी। भर्तृहरि की स्मृति में राजा विक्रमादित्य ने सर्व-प्रथम यह कुण्ड और पैड़ियाँ [सीढ़ियाँ] बनवाई थीं। अतः इसका नाम हर की पैड़ी पड़ा।

श्रूयते च महाभाग महापुण्य सुकर्तृभिः।
तत्रैव गङ्गा-निकटे पादुके ब्रह्मणः शुभे॥ स्कन्दपुराण

स्कन्दपुराण ब्रह्मखण्ड के अध्याय १४ में ब्रह्मकुण्ड का वर्णन है। इसमें कहा गया है कि यह महातीर्थ है और सब प्रकार के दुःख और दरिद्रता को दूर करता है। यह सारे पापों को नष्ट करता है। ब्रह्मकुण्ड में स्नान को स्वर्ग प्राप्ति का साधन बताया

गया है। जो इस तीर्थ में स्नान करते हैं, वे शिव का सामीप्य प्राप्त करते हैं।

सेतुमध्ये महातीर्थं गन्धमादनवर्वते।
ब्रह्मकुण्डमितिख्यातं सर्वदारिद्रयभेषजम्॥ स्कन्दपु०ब्रह्म० १४.२
दर्शनं ब्रह्मकुण्डस्य सर्वपापौघनाशनम्॥ ,, ,, १४.३
ब्रह्मकुण्डे सकृत् स्नानं वैकुण्ठप्राप्तिकारणम्॥ ,, ,, १४.५
तदेतत्तीर्थमासाद्य स्नानं कुर्वन्ति ये नराः।
ते महादेवसायुज्यं प्राप्नुवन्ति न संशयः॥ ,, ,, १४.२२

११. कनखल और मायापुरी

कनखल अत्यन्त प्राचीन स्थान है। इसका स्कन्दपुराण आदि में उल्लेख है। यह दक्षप्रजापति की राजधानी थी और उन्होंने यहीं विशाल यज्ञ किया था। यहीं पर पार्वती सती हुई थीं। यहाँ पर यज्ञ के बाद दक्षेश्वर और महादेव मन्दिर की स्थापना हुई थी। स्कन्दपुराण के रेवाखण्ड में अध्याय १८६ में कनखल तीर्थ का महत्त्व वर्णन किया गया है। इस तीर्थ के वर्णन में पार्वती की शिवा, कनकेश्वरी और चर्ममुण्डा एवं चामुण्डा के रूप में स्तुति की गई है। कनखल के विषय में यह भी कहा गया है कि "को न खलः" से कनखल बना है। अर्थात् कौन दुष्ट व्यक्ति भी यहाँ स्नान करके मुक्त नहीं हो जाता, इसलिए यह कनखल है।

तीर्थं कनखलोत्तमम्। स्कन्द० रेवा० १८६. १
खलः को नात्र मुक्तिं वै भजते तत्र मज्जनात्।
अतः कनखलं तीर्थं नाम्ना चक्रुर्मुनीश्वराः॥ स्कन्द पुराण

मायापुरी के विषय में स्कन्दपुराण में कथन है कि यह नगरी परमात्मा की साक्षात् माया से बनी है, अतः इसे माया या माया-पुरी कहा जाता है। अन्यत्र कहा है कि सती पार्वती के माया से यह क्षेत्र विख्यात हुआ है, अतः इसको मायापुरी कहते हैं। प्राचीन माया क्षेत्र के अन्तर्गत ही हरिद्वार, कनखल आदि ५ तीर्थ आते हैं। ये ५ तीर्थ हैं–हरिद्वार, कुशावर्त (कुशाघाट), बिल्वकेश्वर महादेव, नील पर्वत (चण्डीदेवी मन्दिर वाला पर्वत), कनखल।

माया भगवतो साक्षात् सृष्टिस्थित्यंतकारिणी।
तत्क्षेत्रं हि समाख्यातं भव मुक्ति प्रदायकम्॥ स्कन्द पुराण
ततोऽसौ महाभाग मायाक्षेत्रं बभूव ह।
त्रिषुलोकेषु पुण्यं च यत्र माया सती-वपुः॥ स्कन्द पुराण
हरिद्वारे कुशावर्ते बिल्वके नील पर्वते।
कनखले च कृते स्नाने पुनर्जन्म न विद्यते॥ स्कन्द पुराण

इन तीर्थों पर स्नान से मोक्ष प्राप्त होता है।

गङ्गाद्वारे कुशावर्ते बिल्वके नीलपर्वते।
स्नात्वा कनखले तीर्थे पुनर्जन्म न विद्यते॥

पद्मपुराण उत्तर ८१.४०

१२. गंगा का महत्त्व

पुराणों में गंगा का महत्त्व अनेक स्थानों पर वर्णित है। स्कन्दपुराण और पद्मपुराण में इसका बहुत विस्तृत वर्णन है। स्कन्दपुराण काशी खण्ड में अध्याय २७,२८ और २९ में गंगा की महिमा का विशद वर्णन है। पद्मपुराण उत्तरखण्ड के अध्याय २३, ८१ तथा क्रियायोगसार खण्ड के अध्याय ३,७,८,९ तथा १० में

गंगा के महत्त्व का बहुत विस्तार से वर्णन है। गंगा को सर्वदेवमय मानकर स्तुति की गई है तथा गंगा को धर्म अर्थ काम मोक्ष रूपी पुरुषार्थ चतुष्टय का दाता, पापनाशक, सर्वदोषनाशक और अपवर्ग का साधन बताया गया है।

गंगा लोक और परलोक को सिद्ध करने वाली है। सारे संसार का कल्याण करती है और मनुष्य की भावनाओं के अनुसार फल देती है।

गङ्गा हि सर्वभूतानामिहामुत्र फलप्रदा।
भावानुरूपतो विष्णो सदा सर्वजगद्धिता ॥

स्कन्द० काशी० २७.२३

गंगा के जल के स्पर्श से सारे दोष इसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं, जैसे — अग्नि से रुई।

तूलशैलः स्फुलिङ्गेन यथा नश्यति तत्क्षणात्।
तथा दोषाः प्रणश्यन्ति गङ्गाम्भः स्पर्शनाद् ध्रुवम् ॥

स्कन्द० काशी० २७.६२

वैसाख, कार्तिक और माघ मास में गंगा स्नान का विशेष महत्त्व बताया गया है। संक्रान्ति में इसका लाभ हजार गुना बताया गया है।

वैसाखे कार्तिकेमाघे गङ्गास्नानं सुदुर्लभम्।
दर्शे शतगुणं पुण्यं संक्रान्तौ च सहस्रकम् ॥

पद्मपुराण में गंगाको पूज्य पवित्र और पापनाशिनी कहा गया है।

तथा गङ्गप्रभावेण विलयं याति पातकम्।
मान्येयं सर्वदा लोके पवित्रा पापनाशिनी ॥

पद्मपुराण उ० २३.९

गंगा में स्नान से जो प्रसन्नता होती है, वह सैकड़ों यज्ञों से भी नहीं होती।

स्नातानां यत्र पयसि गाङ्गे ये नियतात्मनाम्।
तुष्टिर्भवति या पुंसां न सा क्रतुशतैरपि॥

पद्मपुराण उ० ८१.२६

गंगा को सर्वोत्तम नदी बताते हुए कहा गया है कि जिस प्रकार देवों में विष्णु, यज्ञों में अश्वमेध, वृक्षों में पीपल श्रेष्ठ है, उसी प्रकार नदियों में गंगा नदी श्रेष्ठ है।

देवानां प्रवरो विष्णुर्यज्ञानां चाश्वमेधकः।
अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां नदी भागीरथी सदा॥

पद्मपु० उत्तर० ८१.४२

हरिद्वार में गंगा स्नान का महत्त्व वर्णन करते हुए कहा गया है कि हरिद्वार, कुशावर्त, बिल्वकेश्वर, नीलपर्वत और कनखल में स्नान करने वाले का पुनर्जन्म नहीं होता है।

गङ्गाद्वारे कुशावर्ते बिल्वके नीलपर्वते।
स्नात्वा कनखले तीर्थे पुनर्जन्म न विद्यते॥

पद्मपु० उत्तर० ८१. ४०

एक श्लोक में गंगा की अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा की गई है कि जो १०० योजन दूर से भी गंगा का नाम लेता है, वह सारे पापों से मुक्त हो जाता है और विष्णुलोक को जाता है।

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

पद्मपु० उत्तर० ८१. ३६

गंगा के विषय में कहा गया है कि यद्यपि गंगा सर्वत्र सुलभ

है, परन्तु इसका विशेष पुण्य हरिद्वार, प्रयाग और गंगासागर में ही है।

सर्वत्र सुलभा गङ्गा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा।
गंगाद्वारे प्रयागे च गङ्गासागरसंगमे ॥

पद्मपु० ७ क्रियायोग० ३. १४

हरिद्वार में गंगास्नान और दान आदि का विशेष महत्त्व बताते हुए कहा है कि सभी देवता इस पवित्र स्थान पर आकर स्नान, दान आदि करते हैं।

सर्वासर्वाः सुराः सर्वे गंगाद्वारं मनोरमम्।
समागत्य प्रकुर्वन्ति स्नानदानादिकं मुने ॥

पद्मपु० ७ क्रियायोग० ३. १५

१३. गंगास्नान से संबद्ध कर्तव्य

पद्मपुराण आदि में जहाँ गंगा का इतना माहात्म्य वर्णन किया गया है, वहाँ पर धार्मिक व्यक्तियों के लिए कुछ कठोर नियम भी बताए गए हैं। जो इन कठोर नियमों का पालन करते हैं, उनको ही गगास्नान का पूरा लाभ प्राप्त होता है। इसका विस्तृत वर्णन पद्मपुराण क्रियायोगसार खण्ड में अध्याय ९ में किया गया है।

कर्तव्य और अकर्तव्य कर्म में निर्देश है कि गंगा यात्रा के समय जूता, छाता, सवारी, मांस भक्षण आदि का सर्वथा परित्याग करे। पैदल यात्रा के कष्ट को ध्यान न दे। घर के सुख वैभव का ध्यान न करे। झूठ न बोले। पाखण्डियों का साथ छोड़ दे।

परनिन्दा लाभ, क्रोध आदि को छोड़ दे। भूमि पर सोवे। किसी प्रकार का शोक न करे। यदि इसके विपरीत कार्य करता है तो उसको गंगास्नान का पूरा फल नहीं मिलता है। जो हरिद्वार और प्रयाग में व्यापार आदि के लिए जाते हैं, उनको आधा ही पुण्य मिलता है।

उपानहं चाऽऽतपत्रं गङ्गायात्रासु वर्जयेत्।
असत्यभाषणं चैव पाखण्डसङ्गमेव च।
द्विर्भोजनं च कलहं गङ्गायात्रासु वर्जयेत्।
परनिन्दा च लोभं च गर्वं च क्रोधमत्सरौ॥
पद्मपु० ७ क्रियायोग० ९. १५, १६, १७

१४. गंगा प्रदूषण निवारण

आज गंगा का प्रदूषण निवारण भारतवर्ष की प्रमुख समस्या है। इसके लिए हमारी सरकार विभिन्न स्रोतों से धन एकत्र करके करोड़ों रुपए गंगा प्रदूषण निवारण पर व्यय कर रही है। यह अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि आज से सैकड़ों वर्षों पूर्व हमारे भारतीय मनीषियों ने जहाँ गंगा और गंगा स्नान का अत्यन्त भावुकतापूर्ण वर्णन किया है, वहाँ उन्होंने इसकी स्वच्छता पर भी सूक्ष्मता से विचार किया है। उन्होंने गंगा की पवित्रता को सर्वांग रूप से पूर्ण रखने के लिए पुराणों आदि में कठोर नियम निर्धारित किए हैं। यदि इन कठोर नियमों का पालन किया जाता तो यह समस्या आज इतने उग्ररूप में हमारे सामने न आती। इस विषय में पद्मपुराण के क्रियायोगसार खण्ड के अध्याय ८ में श्लोक ८ से १३ तक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण नियम प्रस्तुत किए गए

हैं और ये भी बताया गया है कि इन नियमों का पालन न करने से कितना बड़ा पाप चढ़ता है।

पद्मपुराण का कथन है कि गंगा के किनारे मल-मूत्र न करे। जो ऐसा पाप करता है उसका सहस्रों योनियों में भी उद्धार नहीं हो सकता। जो गंगा के जल में या उसके किनारे थूकता है, दूषित जल डालता है, उच्छिष्ट वस्तु डालता है, ऐसा व्यक्ति नरक में जाता है और उस पर ब्रह्महत्या का दोष चढ़ता है। जो गंगा के जल में किसी प्रकार का कोई पाप करता है, वह पाप अमिट होता है और किसी भी तीर्थ में स्नान करने से वह पाप दूर नहीं होता है। अन्य किसी तीर्थ में कोई पाप किया है तो वह गंगा स्नान से दूर हो जाता है। परन्तु यदि गंगा में कोई पाप किया है तो वह कहीं भी शान्त नहीं होता है। इसलिए हमारा यह कर्तव्य है कि गंगा में किसी प्रकार का पाप न करें। अपितु मन, वचन और कर्म से गंगा और गंगातीर पर धर्मसंग्रह ही करें।

मूत्रं वाऽथ पुरीषं वा गङ्गातीरे करोति यः।
न दृष्टा निष्कृतिस्तस्य कल्पकोटि शतैरपि॥
श्लेष्माणं वाऽपि निष्ठीवं दूषिकाम्वाऽश्रु वा मलम्।
गङ्गातीरे त्यजेद्यस्तु स नूनं नारकी भवेत्॥
उच्छिष्टं कफकञ्चैव गङ्गागर्भेच यस्त्यजेत्।
स याति नरकं घोरं ब्रह्महत्यां च विन्दति॥

पद्म पु० ७ क्रियायोग० ८. ८-१०

१५. दान, व्रत और मनः शुद्धि

स्कन्दपुराण और पद्मपुराण में दान, तप और मनःशुद्धि के विषय में अनेक स्थानों पर विस्तृत वर्णन है। स्कन्दपुराण का कथन है कि मनुष्य को अपनी आय का १०वाँ भाग अवश्य दान करना चाहिए। ईश्वर को प्रसन्न करने का यह सर्वोत्तम उपाय है।

न्यायोपार्जितवित्तेन दशमांशेन धीमता।
कर्तव्यो विनियोगश्च ईशप्रीत्यर्थं हेतवे॥

स्कन्दपु० केदार० १२. ३२

पद्मपुराण का कथन है कि अन्न और जल का दान सर्वोत्तम दान है। इसके बराबर और कोई दान नहीं है।

अन्नतोयसमं दानं संसारे नास्ति जैमिने!।
सर्वदान फलान्येव अन्नतोय प्रदानतः॥

पद्मपु० ७ क्रियायोग० २१. ३२

पद्मपुराण में अन्नदान, भूमिदान और विद्यादान को सर्वोत्तम दान बताया गया है।

भूमिदानात्परं दानं न विद्यते नेह किञ्चन।
अन्नदानं तेन तुल्यं विद्यादानं ततोऽधिकम्॥

पद्मपु० स्वर्ग० ५७. १५

पद्मपुराण का कथन है कि मन की शुद्धि ही सबसे बड़ी शुद्धि है। मन ही मनुष्य का बन्धु है और मन ही मनुष्य का शत्रु है। इसलिए मन को सदा पवित्र रखना चाहिए।

शुभाशुभस्य कार्यं च कारणं मन एव हि।
मनसा शुध्यते सर्वं तदा ब्रह्म सनातनम्।
मनएव सदा बन्धुर्मनएव सदा रिपुः॥

पद्मपु० उत्तर० १३१. ८५-८६

पद्मपुराण में ही आगे कहा गया है कि हृदय की शुद्धि ही सबसे बड़ी शुद्धि है। विचारों की शुद्धि से ही परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है।

सर्वेषामेव भावानां भावशुद्धिः प्रशस्यते। पद्मपुराण उ० १३०.९२

१६. कर्मफल

स्कन्दपुराण का कथन है कि कर्मों के आधार पर ही देव-दानव और मनुष्य सभी को सुख और दुःख प्राप्त होते हैं। कर्मों का फल अवश्य मिलता है।

देवानां दानवानां च मनुष्याणां विशेषतः।
कर्म्मैव सुखदुःखानां हेतु भतं न संशयः॥ स्कन्द के० १५.२५

पद्मपुराण का कथन है कि मनुष्य अपने शुभ और अशुभ कर्मों के कारण ही सुख और दुःख प्राप्त करता है। शुभ कर्मों से सुख होता है और दुष्कर्मों से दुःख। कर्म के लिए कहा गया है कि मनुष्य जैसा कर्म करता है, वैसा ही उसको फल मिलता है। जिस प्रकार का बीज बोया जाता है, वैसा ही फल होता है।

सर्वत्र कारणं कर्म शुभाशुभं न संशयः।
पुण्येन कर्मणा पुत्र नरः सौख्यं प्रभुञ्जति॥
दुष्कृतं भुञ्जते चात्र पापयुक्तेन कर्मणा॥ पद्मपु०भूमि०९४. २-३

याद‍ृशं क्रियते कर्म ताद‍ृशं परिभुज्यते।
कर्म एव प्रधानं यद्वर्षारूपेण वर्तते।
क्षेत्रेषु याद‍ृशं बीजं वपते कृषिकारकः।
ताद‍ृशं क्रियते कर्म ताद‍ृशं परिभुज्यते॥

पद्मपु० भूमि० ९४. ७-९

मानव जीवन में कर्म फल अनिवार्य है। कर्मफल के द्वारा ही मनुष्य को रोग आदि होते हैं। कर्म ही मानव का नियामक है। जैसा कर्म किया जाएगा, वैसा ही फल भोगना पड़ेगा। कर्मों का फल टाला नहीं जा सकता है।

विविधाः प्राणिनां रोगः स्मृतास्तेषां च हेतवः॥
तस्मात्तत्त्वं प्रधानं तु कर्मएव हि प्राणिनाम्।
यत्पुरा क्रियते कर्म तदिहैव प्रभुज्यते॥

पद्म० भूमि० ९४. ३०-३१

१७. तीर्थफल के अधिकारी और अनधिकारी

स्मृतियों और पुराणों में कहा गया है कि जो व्यक्ति सदाचारी, संयमी और पवित्रात्मा होते हैं, उनको ही तीर्थों एवं पर्वों का शुभफल प्राप्त होता है। याज्ञवल्क्य स्मृति का कहना है कि जिन व्यक्तियों में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, शुद्धता, संयम, दान, मनोनिग्रह, दया और शान्ति होती है, वे ही तीर्थ फल के अधिकारी होते हैं।

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
दानं दमो दया शान्तिः, ते तीर्थफलभागिनः॥

याज्ञवल्क्य स्मृति आ० अ० १२२

यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैव सुसंयतम् ।
विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते ।।
प्रतिग्रहादुपावृत्तः संतुष्टो येन केन चित् ।
अहंकारनिवृत्तश्च स तीर्थफलमश्नुते ।।

पद्मपु० सृ० १९. ८-९

पद्मपुराण में कहा गया है कि जिसकी इन्द्रियाँ संयम में हैं, जिसमें विद्या तप और कीर्ति है, जो दान नहीं लेता सदा सन्तुष्ट रहता है और अहंकार रहित है, वह तीर्थ फल का अधिकारी है । स्कन्द पुराण में कहा गया है कि ये व्यक्ति तीर्थ फल के अधिकारी नहीं हैं। ये हैं–अश्रद्धालु, पापी, नास्तिक, संदेहशील, और कुतर्की । वास्तविक श्रद्धा के अभाव के कारण इन्हें तीर्थ फल प्राप्त नहीं होता है ।

अश्रद्दधानः पापात्मा, नास्तिकोऽच्छिन्नसंशयः ।
हेतुनिष्ठश्च पंचैते, न तीर्थफल भागिनः । स्कन्दपु०

गंगास्तोत्रम्

गङ्गे ! समस्तजगदम्ब ! चलत्तरङ्गे-
ऽनङ्गादिचारुत रमस्तकपुष्पमाले ! ।
कंसारिचारुचरणद्वयरेणुहन्त्रि !
भक्त्या नमामि दुरितक्षयकारिणी त्वाम् ।।

मातः समस्तसुखदे ! प्रवरे नदीनां,
व्यासादिविप्रचयगीतगणे गुणाढ्ये ! ।
संसारभैरवमहार्णवमध्यनौके !
वन्दे तवाङ्घ्रियुगलं दुरितापहारि ! ।।

यस्यास्तवाऽम्बुकणिकामपि जह्नुकन्ये !
सौदास नाम नृपतिर्द्विजकोटि हन्ता ।
सम्प्राप्य मुक्तिमगमत् त्रिसुरैरलभ्यां,
तां त्वां नमामि शिरसा वरदे ! प्रसीद ॥

नारायणाच्युत जनार्दन कृष्णराम,
गङ्गादिनाम गदतो मम देवि ! मातः ।
संसारपातकनिवारिणि ! देहपातस्-
त्वद्वारिणीह भवतु त्वदनुग्रहेण ॥

किम्वा तपोभिरखिलेश्वरि ! किं जपैर्वा,
दानैश्च किं तुरगमेधमुखैश्च किं वा ।
त्वन्नीरशीकरमवाप्य सुरैरलभ्यां,
मुक्तिं व्रजन्ति मनुजा अतिपापिनोऽपि ॥

स्वाहा त्वमेव परमेश्वरि ! या स्वधा त्वं,
गीर्वाणवृन्दपितृलोकसुतृप्तिहेतोः ।
सत्त्वं रजस्तम इति त्रिगुणस्वरूपां,
सृष्टिस्थितिप्रलयकारिणि ! नौमि तां त्वाम् ॥

धत्ते ललाटफलके तव सैकतं यः,
पुण्ड्रं च देवि ! तव तीरमृदा सदैव ।
त्वन्नामसर्वरसधाम वदेच्च भक्त्या,
तत्पादरेणुरखिलोऽस्तु ममैव मूर्ध्नि ॥

त्वद्रोधसि त्रिपथगे ! वसतिं विधाय,
पीत्वा च वारि तव पातकनाशकारि ।

स्मृत्वा च नाम तव वीचिरसं च दृष्ट्वा,
संसारबन्धनहरे ! मम जातु जन्म ॥

नाकं शुभे सुमहदुल्लसिता मनुष्याः,
कुर्वन्ति भीतिरतिदुर्गमवर्त्म मत्वा ।

व्यर्थेव सा किल यतोऽमृतदे ! त्वदीयं,
सोपानभूतमुदकं त्रिदिवप्रयाणे ॥

पापानि रोगनिकराश्च शरीरदेहे,
तिष्ठन्ति तावदखिलेश्वरि ! मुक्तिदात्रि ! ।

कुर्वन्ति यावदमलेषु तवोदकेषु,
स्नानं नहि त्रिपथगे ! सरितां प्रधाने ! ॥

यस्यास्तवाच्युतविरिञ्चिशिवादयोऽपि,
शक्रादिदेवनिकरा व्रजितुं महिम्नाम् ।

पारं परे परममोक्षपदप्रदात्रीं,
तां त्वां वदन्ति तटिनीमिति केऽपि मोहात् ॥

गङ्गे ! समस्त सुखदायिनि ! किञ्चिदेव,
जानाति ते पशुपतिर्भगवान्महत्त्वम् ।

यस्मादसौ सुमनसां प्रवरोऽतिभक्त्या,
धत्ते सदैव शिरसा जदीश्वरीं त्वाम् ॥

गङ्गेदेवि जगन्मातः ! प्रसीद परमेश्वरि ! ।
परिपाहि नमस्तुभ्यं रक्ष मां सेवकं स्वकम् ।

परब्रह्मस्वरूपां त्वां सर्वलोकैकमातरम् ।
...महं स्तोतुं भ्रान्तचित्तोऽत्र मोक्षदे ! ॥

...पुराण ७ क्रियायोगसार खण्ड ७.९९-११२

वेदामृतम्-ग्रन्थमाला

(४० भागों की रूपरेखा)

लेखक—डा० कपिलदेव द्विवेदी

हिन्दू-धर्म के प्राणस्वरूप वेदों का ज्ञान सामान्य जनता तक पहुँचाने की दृष्टि से वेदामृतम्-ग्रन्थमाला विषयानुसार ४० भागों में प्रकाशित की जा रही है :

प्रकाशित भाग—१. सुखी जीवन, २. सुखी गृहस्थ, ३. सुखी परिवार, ४. सुखी समाज, ५. आचार-शिक्षा, ६. नीतिशिक्षा, ७. वेदों में नारी, ८. वैदिक मनोविज्ञान।

शीघ्र प्रकाश्य—९. ऋग्वेद-सुभाषितावली, १०. यजुर्वेद-सुभाषितावली, ११. सामवेद-सुभाषितावली, १२. अथर्ववेद-सुभाषितावली, (वेदों में आयुर्वेद)—१३. शरीर-विज्ञान, १४. रोग-चिकित्सा, १५. विष-चिकित्सा, १६. विविध औषधियाँ. (वैदिक राजनीतिशास्त्र)–१७. राष्ट्रधर्म, १८. राज्य-शासन, १९. सैन्य-व्यवस्था, (वैदिक समाजशास्त्र)–२०. वर्णाश्रम-धर्म, २१. संस्कार, (वेदों में विज्ञान) २२. भौतिकी, २३. रसायन शास्त्र, २४. वनस्पति-विज्ञान, २५. जीव-विज्ञान, २६. अन्य विज्ञान, (वैदिक दर्शन एवं अध्यात्म)–२७. ईश्वर, ब्रह्म, २८. जीवात्मा एवं प्रकृति, २९. अध्यात्म-मीमांसा, ३०. आध्यात्मिक विद्याएँ, ३१. वेदों में कृषि एवं विविध शिल्प, ३२. वैदिक यज्ञ-विज्ञान, ३३. वैदिक शिक्षाशास्त्र, ३४. वेदों में अर्थशास्त्रीय तत्त्व, ३५. वेदों में भाषाशास्त्रीय तत्त्व, ३६ वेदों में दार्शनिक सिद्धान्त, ३७. वेदों में काव्यशास्त्रीय तत्व, ३८. वेदों में ललित कलाएँ ३९. वैदिक देवों का आध्यात्मिक स्वरूप, ४०. वैदिक देवों का वैज्ञानिक स्वरूप। इस महान् यज्ञ की पूर्ति में अपनी एक आहुति देकर वेद-प्रचार की इस योजना को सफल बनाने में अपना सहयोग प्रदान करें।

वेदप्रेमियों को अनुपम उपहार

वेदामृतम्-ग्रन्थमाला

[४० भागों में प्रकाश्य]

लेखक—डा० कपिलदेव द्विवेदी

कुलपति, गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर [हरिद्वार]

प्रकाशित ८ भाग	प्रचार संस्करण	सजिल्द
१. सुखी जीवन	७.५०	१५.००
२. सुखी गृहस्थ	८.००	२०.००
३. सुखी परिवार	८.००	२०.००
४. सुखी समाज	८.००	२०.००
५. आचार-शिक्षा	१०.००	२०.००
६. नीति शिक्षा	१०.००	२०.००
७. वेदों में नारी	१५.००	२५.००
८. वैदिक मनोविज्ञान	१५.००	२५.००

[प्रत्येक भाग में विषय से संबद्ध चारों वेदों से सकलित महत्त्वपूर्ण १०० मन्त्र, उनका अन्वय, शब्दार्थ हिन्दी और अग्रेजी में अनुवाद, विस्तृत व्याख्या और टिप्पणी। भूमिका में पूरे ग्रन्थ का सारांश और अन्त में उस भाग से संबद्ध १०० सुभाषित हिन्दी-अर्थ सहित]

४० भागों का प्रस्तावित मूल्य—सजिल्द--१२५० रु०/अजिल्द--७५० रु०

पूरे सेट का अग्रिम मूल्य— सजिल्द--६०० रु० /अजिल्द--३०० रु०

आज ही पूरे सेट का सदस्य बनकर अपनी प्रति सुरक्षित कराएँ।

प्रकाशक : विश्वभारती अनुसन्धान परिषद्

ज्ञानपुर (वाराणसी)